देश की रग-रग में व्याप्त - महादेव

देवर्षि कलानाथ शास्त्री
(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

इस देश के कोने-कोने में दूर-दूर तक जिन देवताओं की छवि पूजी जाती है, विदेशों तक जिनकी पूजा का क्षेत्र फैला हुआ है, उनमें अग्रणी है शिव और विष्णु। देश का कोई शहर या गाँव नहीं होगा जहाँ कोई शिव मन्दिर न हो अथवा विष्णु का अर्थात् राम का या कृष्ण का कोई मन्दिर न हो। जयपुर जैसे नगरों में तो गली-गली, मोहल्ले मोहल्ले में कोई न कोई शिव मन्दिर मिल जाएगा। देशवासियों के जन्म, मृत्यु, जीवन के हर पल के साथ इन देवताओं का जुड़ाव हो गया है। महादेव शिव ने देश को जिस तरह जोड़ा है वह भी उनकी अद्भुत रूप से वन्दनीय महिमा है।

शिव की पूजा दो प्रकार से की जाती है, अव्यक्त स्वरूप की पूजा (शिवलिंग के रूप में) और व्यक्त प्रतिमा या स्वरूप की पूजा (पंचमुखी देवता के रूप में या पार्वती के साथ युग्मपूजा अथवा अर्द्धनारीश्वर की पूजा)। इनमें शिवलिंग की पूजा इस देश में ही नहीं विश्व भर में इतनी व्याप्त हो गई है कि उसकी विवेचना में विद्वानों ने पोथियाँ लिख डाली है।

विश्व में व्यापक

शोध विद्वानों के एक बहुत बड़े तबके ने यह स्थापित किया है कि मूलतः शिव अनार्य देवता थे। कुछ इन्हें मूलतः द्रविड़ संस्कृति के देव मानते हैं और कुछ इनकी अव्यक्त पूजा को विश्व में व्याप्त लिंग पूजा का भारतीय रूप बताते हैं। भारतीय मनीषियों ने स्पष्ट किया है कि यह सब पाश्चात्य शोध प्रक्रिया का करिश्मा है जो अन्य देशों में प्रचलित प्रथाओं की तुलना करता-करता हमारी प्राचीनतम परम्पराओं पर भी उनका आरोपण कर देता है। हो सकता

है विभिन्न प्राचीन संस्कृतियों की इन परम्पराओं में कुछ साम्य हो किन्तु मूलतः रुद्र वैदिक देवता थे, जिनका संहार व प्रलय के उग्र देवता के रूप में वर्णन ऋग्वेद में तथा जिनके रौद्र और शिव (सौम्य) रूपों का वर्णन यजुर्वेद ने किया है और श्वेताश्वतर जैसी उपनिषदों ने जिनकी स्तुति गाई है। प्रलय का यह देवता धीरे-धीरे सृष्टि का देवता बना, मृत्यु का देवता जीवनदायी बना और महाकाल सौभाग्यदायक मृड बना। किन्तु मूलतः वह यहीं का था। यह अवश्य है कि सिन्धु सभ्यता में भी पशुपति के रूप में महादेव मौजूद हैं और वृषभ उनका प्रतीक है।

यह भी एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि जिस प्रकार हमारे यहाँ शिव लिंग पूजा चलती रही है उसी प्रकार अन्य प्राचीन संस्कृतियों में भी लिंग पूजा किसी न किसी रूप में रही है। तभी तो कुछ विद्वान **'फैलस् वरशिप'** को इसके साथ जोड़ देते है। सृष्टि के देवता की पूजा के रूप में लिंग पूजा मिस्र में भी थी, ग्रीस में भी और रोम में भी। मिस्र में ओसायरिस देव का रूप बिल्कुल वैसा ही है, उसकी आकृति शूलपाणि और सर्पाभूषणधारी देवता की है जिसका प्रतीक बैल है। उसकी प्रतीक पूजा भी की जाती है। रोमन संस्कृति का देवता प्रायेपस भी सृष्टि का देव है जो पुरुष रूप में पूजा जाता है।

प्रो. रामदास गौड़ जैसे भारतीय विद्वानों ने तो यह सिद्ध किया था कि अरब में पहलें शिवलिंगों की पूजा का बहुत प्रचलन था और मूर्ति पूजा समाप्त कर मोहम्मद साहब ने जब इस्लाम की स्थापना की तो उनमें से पूजा के एक काले पत्थर (शिव लिंग) को मक्का में काबा के अन्दर स्थापित किया जिसे अलहजर-अल-असवद कहते हैं और आज भी हज के यात्री जिसे चूमते हैं। उन्होने तो इन्हें मक्केश्वर महादेव के नाम से पुकारा है। जो भी हो, इस देश के बाहर भी महादेव ने अपना साम्राज्य स्थापित किया है यह तो स्पष्ट ही है। सारा नेपाल पशुपति नाथ के आगे शीश झुकाता है, जिस प्रकार मेंवाड़ के महाराणाओं के उपास्य एकलिंग जी है उसी प्रकार नेपाल नरेशों के उपास्य पशुपति नाथ हैं।

भारतीय परम्परा

अन्य प्राचीन संस्कृतियों में लिंग पूजा की जो परम्परा रही उसने भारत पर प्रभाव डाला हो या भारत की शिव पूजा बाहर गई हो इन सम्भावनाओं पर न झगड़कर भारतीय परम्परा को देखें तो लगता है कि वेदों के समय जिस रुद्र को एक अदृष्ट महातत्व के रूप में देखा जाता था, पुराणों ने उसकी विविध पुराकथाएँ अद्भुत चमत्कारों के साथ प्रसारित कीं ओर अव्यक्त पूजा के रूप में शिव लिंगों की पूजा परम्परा भी शुरू की।

हमारे यहाँ यह शिव लिंग पूजा पुरुष चिन्ह की पूजा नहीं बताई गई बल्कि अग्नि के ऊर्ध्वगामी स्वरूप की पूजा बताई गई है। तभी तो इन्हें ज्योतिर्लिंग नाम दिया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण कहता है **'अग्निर्वा रुद्रः'**। इस अग्नि रूप रुद्र

को शिव लिंग के रूप में देखा गया है। वायु पुराण, शिव पुराण व लिंग पुराण में इसका रहस्य वर्णित किया गया है। स्कन्द पुराण में बताया गया है कि प्रलयकाल में जब ब्रह्मा और विष्णु अपने वर्चस्व के लिए झगड़ रहे थे तो एक विराट अग्नि स्तम्भ प्रकट हुआ जिसका ऊपर और नीचे का छोर अज्ञात था। विष्णु ने ब्रह्मा से कहा- जो इसका ओर-छोर पा लेगा, विजयी होगा। तुम इसके ऊपर का छोर खोजो, हम नीचे का तलाशते हैं। विष्णु वाराह बनकर खोजने लगे और ब्रह्मा हंस बनकर उड़े। एक हजार वर्ष की निरन्तर उड़ान के बाद भी उस अग्नि लिंग का ओर-छोर पता नहीं लगा। ब्रह्मा ने उड़ते हुए केतकी के (केवड़े के) एक पत्ते को गिरते हुए देखा और उससे पूछा कि इस ज्योतिर्लिंग का सिर कहाँ है। केतकी पत्र ने बताया कि मैं वहीं से गिरा हूँ। दस कल्प पहले वहाँ से गिरा था अब तक आधा भी नहीं पहुंच पाया हूँ।

इस अनन्त यात्रा से घबराकर ब्रह्मा ने कहा कि नीचे विष्णु इसकी जड़ तलाश रहे हैं वे मिले तो कह देना कि ब्रह्मा इसके ऊपर के सिरे तक पहुँच गये हैं। फिर ब्रह्मा ने घोषणा कर दी कि उन्होंने ऊपरी सिरा देख लिया है। इस सफेद झूठ को ब्रह्मा के डर से केतकी ने भी कह दिया। विष्णु ने विश्वास नहीं किया। उन्होंने तपस्या करके शिव को प्रसन्न किया और पूछा कि क्या यह सच है? शिव ने प्रकट होकर बताया कि यह मेरा ही ज्योतिर्लिंग है। इसका अन्त कोई नहीं पा सकता। इस पर झूठी गवाही के आरोप में केतकी को शाप दिया गया कि शिव पर नहीं चढ़ाई जाएगी। आज तक केवड़ा शिव पर नहीं चढ़ता है।

ज्योतिर्लिंग के उद्भव की इस कथा से महादेव के इस ज्योतिर्मय विराट रूप की अनन्तता भी संकेतित है और ब्रह्मा-विष्णु-महेश की त्रिमूर्ति में शिव की प्रमुखता भी। त्रिमूर्ति की यह अवधारणा भी इस देश की अद्भुत संकल्पना है जिसके विवेचन का यहाँ अवकाश नहीं। हमारी यह अद्भुत परंपरा रही है कि तीनों देवताओं ने एक-दूसरे का सम्मान किया है, कभी शिव ने विष्णु की महिमा गाई है तो विष्णु ने शिव की पूजा की है। वैसे कुछ विद्वानों की यह मान्यता भी है कि त्रिमूर्ति की यह अवधारणा द्रविड़ सभ्यता की देन है। अस्तु।

द्वादश ज्योतिर्लिंग

पुराणों के समय से ही शिव की अव्यक्त पूजा (शिव लिंग पूजा) की महिमा गाई जाने लगी और शिव पूजा के अनेक सम्प्रदाय और स्तोत्र प्रकट हुए। इन सबमें शिव लिंग की पूजा के भाँति-भाँति के विधान बताए गये और अनेक तंत्र भी विकसित हुए। शिव पूजा का यह विशाल साम्राज्य पूरे देश की रग-रग में बस गया। जहाँ एक ओर हिमालय को शिव का ससुराल बताया गया वहाँ दूसरी ओर रावण की लंका के अधिपति और उपास्य के रूप में शिव की महिमा दक्षिण तक फैल गई।

रामायण ने बताया कि रावण महान शिव भक्त था और प्रतिदिन एक विशाल स्वर्णमय शिव लिंग की पूजा करता था। वह जहाँ जाता था वह विशाल स्वर्णिम शिवलिंग उसके साथ चलता था। पूरी भारतीय संस्कृति को और देश के कोने-कोने को अपनी महिमा के एक सूत्र में पिरोकर शिव ने किस प्रकार एक कर दिया इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है देश भर में फैले बारह ज्योतिर्लिंगों की पूजा की परम्परा। वैसे तो इन १२ प्रमुख शिव तीर्थों के अतिरिक्त भी बहुत से महत्वपूर्ण शिव मन्दिर हैं। जैसे अमरनाथ का बर्फ का शिव लिंग और भुवनेश्वर के प्रसिद्ध लिंगराज मन्दिर का ग्रेनाइट का विशाल शिवलिंग । किन्तु इन १२ की उत्कृष्ट महिमा बताकर इन्हें सर्वोत्तम तीर्थ का दर्जा दिया गया। उल्लेखनीय है कि ये तीर्थ देश के सभी कोनों में फैले हुए हैं तभी तो कुछ लोगों की यह धारणा है कि इन्हे भी शंकराचार्य ने स्थापित किया होगा।

आश्चर्य की बात यह है कि रोमन सभ्यता के देवता प्रायेपस की पुराकथा भी ठीक इसी प्रकार है कि उनके शरीर के शत्रुओं ने टुकड़े-टुकड़े कर डाले थे किन्तु बाद में उनकी पत्नी आइसिस और पुत्र हेरोडोटस ने एक-एक टुकड़े को सारे देश के विभिन्न भागों में स्थापित कर दिया और उनकी पूजा देशवासियों द्वारा की जाने लगी।

पुराण काल से ही इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों की तीर्थ यात्रा का महत्व और इनकी अद्भुत महिमा बताई जाती रही है। सदियों की लम्बी यात्रा के कारण यह अवश्य हुआ कि विभिन्न स्थानों के विद्वानों ने यह दावा किया है कि अमुक ज्योतिर्लिंग हमारे यहाँ स्थापित है। यही कारण है कि कुछ ज्योतिर्लिंगों के बारे में विभिन्न मत मिलते है। शिव पुराण में १२ ज्योतिर्लिंगों का जो विवरण है उसमें सर्वप्रथम सोमनाथ मन्दिर बताया गया है और घुश्मेश्वर को अन्तिम। इनमें काशी विश्वनाथ का स्थान सातवाँ है पर कुछ विद्वानों ने पाठान्तर बताकर यह सिद्ध करने का प्रयास भी किया कि सर्वप्रथम ज्योतिर्लिंग काशी **विश्वनाथ** ही है।

सौराष्ट्र के **सोमनाथ** को प्रथम ज्योतिर्लिंग माना गया है जिसका सुदीर्घ इतिहास सुविदित है। यही वह समृद्ध मन्दिर था जिसके विशाल स्वर्ण भण्डार और रत्न जटित मन्दिर का विध्वंस मूर्तिभंजक महमूद गजनवी ने किया था जिसके बाद अनेक राजाओं ने मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया और मूर्ति की पुनः प्रतिष्ठा की गई। पश्चिम समुद्र तट पर सोमनाथ का यह मन्दिर आज भी यात्रियों का प्रमुख आकर्षण है।

आन्ध्र में कृष्णा नदी के तट पर **मल्लिकार्जुन** नाम का दूसरा ज्योतिर्लिंग है जो श्रीशैल पर स्थित है। यह श्रीशैल विकट ऊँचाई पर है और इस पर अनेक मन्दिर हैं। अगले दो ज्योतिर्लिंग नर्मदा क्षेत्र में है। तीसरा ज्योतिर्लिंग उज्जैन के **महाकालेश्वर** का है जिसका इतिहास विक्रमादित्य और कालिदास जैसे परम्परागत पुरुषों से जुड़ा हुआ है।

यही कुछ दूरी पर नर्मदा तट पर **ओंकारेश्वर** नाम का चौथा ज्योतिर्लिंग है। यह भी इस देश की शिव और विष्णु के समन्वय में निष्ठा का प्रमाण है कि जो विष्णु के मन्दिर बद्रीनाथ को जाता है वह शिव के मन्दिर केदारनाथ में भी अवश्य जाएगा।

छठा ज्योतिर्लिंग **भीमशंकर** का है जिसे डाकिनी ग्राम में स्थित बताया गया है। डाकिनी कहाँ है इस बारे में तीन मत है। महाराष्ट्र में पूना के पास भीमशंकर का प्रसिद्ध मन्दिर है जिसे अधिकांश छठा तीर्थ मानते हैं। किन्तु कुछ लोग गौहाटी के पास आसाम में भीमशंकर के ज्योतिर्लिंग होने का दावा करते हैं और कुछ उत्तर प्रदेश में नैनीताल के पास बने भीमशंकर मन्दिर को छठा तीर्थ मानते हैं। काशी **विश्वेश्वर** को सातवाँ ज्योतिर्लिंग माना जाता है। इनकी महिमा सुविदित है जिनकी पूजा शंकराचार्य ने भी की थी और जिनके मन्दिर में स्वर्णकलश राजा रणजीतसिंह का और अहल्या बाई का सुवर्ण चढ़ाया हुआ है।

महाराष्ट्र में नासिक के पास **त्रियम्बकेश्वर** का ज्योतिर्लिंग है, जो आठवाँ है। यह गोदावरी के तट पर स्थित है। नवाँ ज्योतिर्लिंग **वैद्यनाथ** का है जिसे रावण का उपास्य माना जाता है। इसकी यह कथा प्रसिद्ध है कि रावण हिमालय पर तपस्या द्वारा शिवजी से वर लेकर लंका में स्थापित करने हेतु इस शिवलिंग का वहन कर रहा था और शर्त यह थी कि इसे वह पृथ्वी पर नहीं रखेगा। चिताभूमि में आकर रावण को लघुशंका करने की आवश्यकता हुई और वह इसे एक अहीर को थमाकर थोडी देर को चला गया। अहीर ने गलती से उसे पृथ्वी पर रख दिया जिसके फलस्वरूप यह शिव लिंग वहीं अचल हो गया और वहीं वैद्यनाथ नाम से इसकी पूजा की जाने लगी। यह चिताभूमि कौन सी है? इस पर भी कहीं-कहीं मतभेद पाया जाता है।

अधिकांश मतों में तो यह बिहार के संथाल परगना में स्थित प्रसिद्ध वैद्यनाथ धाम का ही अभिधान है किन्तु कुछ लोग महाराष्ट्र राज्य में स्थित परड्डी में एक वैद्यनाथ के मन्दिर को नवां ज्योतिर्लिंग बतातें हैं। इसी प्रकार दसवाँ ज्योतिर्लिंग शिव पुराण में दारुकावन में स्थित नागेश बताया गया है। यह दारुकावन आध्र में स्थित है जहाँ नागेश का मन्दिर है, किन्तु कुछ लोग अल्मोडा के पास स्थित नागेश मन्दिर को दसवाँ ज्योतिर्लिंग बताते हैं। कुछ दारुकावन के द्वारका मानकर द्वारिका में स्थित नागेश मंदिर को यह दर्जा देते हैं।

यह भी स्पष्ट है कि इस प्रकार के मत मतान्तर प्राचीन धर्मों में निकलते जाना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है और श्रद्धा के आधिक्य के कारण उस तीर्थ को अपनी भूमि से जोड़ने की ललक का ही एक उदाहरण है। यह भी स्पष्ट है कि ऊपर उल्लिखित मतों में प्रथम मत (बहुमत) ही देश में प्रायः सर्वमान्य है। अन्य मतों के उल्लेख जानकारी की दृष्टि से

ही किये गये है। ११ वाँ ज्योतिर्लिंग सेतुबन्ध **रामेश्वरम्** का है जिसकी स्थापना भगवान रामचन्द्र ने की थी यह बताया जाता है। तमिलनाडु में समुद्र तट पर स्थित यह तीर्थ विश्व प्रसिद्ध है और इसका शिवलिंग स्फटिक मणि का है। जिस प्रकार देश के पश्चिम तट को सोमनाथ की छाया उपलब्ध है उसी प्रकार दक्षिण तट रामेश्वरम् की छत्रछाया में और पूर्व भाग वैद्यनाथ की छत्रछाया में है जबकि उत्तर में हिमशिखरों के केदारनाथ को रखा गया है। इस प्रकार देश के चारों कोनों में फैली हुई यह शिवमहिमा देश की एकता का अद्भुत सूत्र है। १२ वां ज्योतिर्लिंग घुश्मेश्वर है जो शिवालय नामक स्थल पर स्थापित किया गया है। यह एलोरा की गुफाओं के पास है जो वर्तमान में महाराष्ट्र में है। हाल ही में राजस्थान ने भी एक ज्योतिर्लिंग अपने यहाँ होने का दावा किया है।

कुछ लोगों ने यह अभिमत व्यक्त किया है कि राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले के कस्बे सिवाड़ का नाम शिवालय का ही अपभ्रंश है। वहाँ स्थित एक शिव मन्दिर को घुश्मेश्वर का मन्दिर भी बता दिया गया है। यह भी राजस्थान के शिव भक्तों की इस ललक का प्रतीक है कि राजस्थान को क्यों न किसी ज्योतिर्लिंग से जोड़ा जाय। घुश्मेश्वर नाम शिवभक्त महिला घुश्मा के नाम पर पड़ा था।

शिव पूजा का यह व्यापक क्षेत्र देश-विदेशों के विभिन्न युगों के इतिहास को भी अनेक छोरों को छूता है। इस प्रकार महाकाल देश और काल दोनों में व्याप्त है फिर भी दोनों से परे है त्रिकालातीत है। महाशिव रात्रि महाकाल के स्मरण का ही एक दिन है। इस वर्ष का यह पर्व इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि हरिद्वार में लग रहे कुंभ मेले के अवसर पर जो प्रमुख स्नान होगा उससे पूर्व जो स्नान पर्व आएंगे उनमें यह भी एक प्रमुख स्नान पर्व होगा। हरिद्वार स्वयं शिव और विष्णु दोनों के सांनिध्य द्वारा पावित तीर्थ है। इसे हरि विष्णुद्वार कहकर विष्णु के साथ जोड़ा जाता है और हर (शिव) द्वार कहकर शिव के साथ। दोनों ही हमारे आराध्य है, ठीक उसी प्रकार जैसे पतित पावनी गंगा भी दोनों ही से जुड़ी हुई है।